जयसेन आचार्य, ३२० वीं गाथा की संस्कृत टीका का हिन्दी है। पहले दो पैराग्राफ आ गये हैं।

फिर विशेष कहा जाता है... क्या ? **औपशमिकादि पाँच भावों में...** पाँच भाव हैं। आत्मा में पाँच भाव हैं। एक, त्रिकाली पारिणामिकभाव और एक, पर्याय / अवस्था के चार भाव...

मुमुक्षु : भाव का अर्थ क्या ?

पूज्य गुरुदेवश्री : भाव का अर्थ वस्तु है... है... भवन / अस्तिरूप, होना है। त्रिकाली वस्तु पारिणामिकभाव से है और एक समय की पर्याय चार भाव से है। भाव अर्थात् भवन, होना। एक पर्यायरूप होना और एक त्रिकालरूप होना। यह बात सूक्ष्म है, समझ में आया ? पुस्तक है या नहीं सामने ? कपूरचन्दजी ! पुस्तक रखी है ? आया है ? पन्ना।

औपशमिक... पाँच भाव, पाँच भाव। पाँच भाव सुने हैं या नहीं कभी ? अब सुनते हैं, ठीक ! अभी तक तो कुछ सुना नहीं, कहाँ से सुनें ! सुनानेवाला नहीं मिला था। यह आत्मा है न आत्मा ! शरीर-मन-वाणी भिन्न, कर्म भिन्न उनके साथ सम्बन्ध नहीं। यह आत्मा-वस्तु जो अन्दर है, उसमें पाँच प्रकार के भाव (एक) त्रिकाली भाव अर्थात् भवन रहनेवाली चीज़, उसको पारिणामिकभाव कहते हैं, पारिणामिक अर्थात् सहजभाव, जिसमें कोई अपेक्षा नहीं होती, उसका नाम पारिणामिकभाव है और उसकी पर्याय / अवस्था / हालत में चार भाव। वे चार भाव द्रव्य में नहीं हैं - ऐसा सिद्ध करना है। समझ में आया, शोभालालजी !

यह कहते हैं देखो ! **औपशमिकादि पाँच भावों में...** भाव अर्थात् अस्तित्ववाला पदार्थ, परन्तु अस्तित्व में दो प्रकार अस्तित्व। वास्तव में त्रिकाली भाव, वह वास्तविक अस्ति है, वह कल आया था। आत्मद्रव्य लाभ हेतु... कल तुम नहीं थे। समझ में आया ?

यह ५६ गाथा, पंचास्तिकाय-आत्मद्रव्य लाभ, आत्मस्वरूप का लाभ / अस्ति। एक, एक चैतन्य अपना त्रिकालीस्वरूप की अस्ति। हयाति शब्द तो आता है न तुम्हारे हिन्दी में? मौजूदगी; ऐसा त्रिकालीस्वरूप जो मौजूदगी, उसको यहाँ पारिणामिकभाव कहने में आता है। पारिणामिक अर्थात् सहजभाव, उसमें किसी पर्याय की अपेक्षा नहीं है, पर की अपेक्षा नहीं है। ऐसे आत्मा में एक पारिणामिकभाव त्रिकाल है, वही आत्मा, वास्तव में वही आत्मा है। लो, वास्तव में। समझ में आया? यह नियमसार में आता है, १५ वीं गाथा में आता है, १५वीं गाथा में, भाई! खरेखर (वास्तव) में वह आत्मा (है)।

वस्तु-अपने त्रिकालस्वभावभावरूप जीव, जो दृष्टि का विषय, जो सम्यग्दर्शन का विषय / ध्येय, जो सम्यग्दर्शन का विषय कि जिसका विषय करने से सम्यग्दर्शन होता है।

मुमुक्षु : खरेखर अर्थात् क्या?

पूज्य गुरुदेवश्री : खरेखर अर्थात् यथार्थ। वास्तव में, खरेखर, यथार्थ में। है या नहीं? यह तो हिन्दी है, इसलिए जरा ख्याल बाहर रह जाता है... हमारे तो गुजराती का परिचय है न? हमारे बहुत.... ३८ - ३८ नियमसार में है न? ३८ गाथा देखो! क्या कहते हैं? सूक्ष्म बात है 'जीवादि सात तत्त्वों का समूह परद्रव्य होने से' जीव की एक समय की पर्याय को यहाँ जीव कहा है। त्रिकाली द्रव्य को छोड़कर एक समय की पर्याय को जीव कहा है और अजीव, संवर, निर्जरा, मोक्ष आदि सातों (ही) परद्रव्य है। समझ में आया? शान्ति से (समझना) यह तो मक्खन-मक्खन है, जैनदर्शन का (मक्खन है)। 'जीवादि सात तत्त्वों का समूह परद्रव्य होने के कारण वास्तव में उपादेय नहीं है', वह आदरणीय नहीं है। जीव की एक समय की पर्याय, जिसे यहाँ चार भाव कहेंगे, वह पर्याय है। वह आदरणीय नहीं, उपादेय नहीं, अंगीकार करनेयोग्य नहीं; जाननेयोग्य है बस, इतना! समझ में आया?

'वह सहज वैराग्यरूपी (महल के शिखर का शिखामणि...') यह तो मुनि की अपनी बात ली है। औदयिक आदि चार भावान्तरों को अगोचर होने से... कैसा है भगवान आत्मा ध्रुव? कि जो ये पर्यायरूप चार भाव कहेंगे—उदय, उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक, वह पर्याय उस द्रव्य को स्पर्श नहीं करती। **द्रव्य को पर्याय का अवलम्बन नहीं और पर्याय को द्रव्य का अवलम्बन नहीं।** समझ में आया?

भावान्तरों... भावान्तर अर्थात् पारिणामिकस्वभावभाव त्रिकाल से भावान्तर अन्य पर्याय, अन्य भाव (हैं)। उदय, उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक आये न चार (भाव)?

यह शुद्ध सहज परमपारिणामिकभाव जिसका स्वभाव है—ऐसा कारणपरमात्मा वास्तव में आत्मा है। यथार्थ में-वास्तव में वह आत्मा है। आहा..हा..! ए पण्डितजी! क्या कहा?

मुमुक्षु : त्रिकाली आत्मा कारणपरमात्मा है।

पूज्य गुरुदेवश्री : कारणपरमात्मा, लो! परन्तु यह त्रिकाली जो परमस्वभावभाव है, वही वास्तव में आत्मा है। खरेखर आत्मा-हमारी गुजराती में; हिन्दी में वास्तव में आत्मा है (संस्कृत में) संस्कृत में समझे यहाँ '**कारणपरमात्माहि आत्मा**' कारणपरमात्मा ही आत्मा है। संस्कृत में 'हि' आया! 'हि' आया न? 'हि' का अर्थ यहाँ वास्तव में किया है। गुजराती में खरेखर किया है। भगवान आत्मा एक सेकेण्ड के असंख्य भाग में, परमपारिणामिक -स्वभावभाव, स्वभावभाव; जिसे किसी की अपेक्षा नहीं ऐसा त्रिकालीभाव वही वास्तव में-यथार्थ में-खरेखर आत्मा है। उसकी दृष्टि करने का नाम सम्यग्दर्शन है।

अब यहाँ कहाँ से-आगे से सीखने को आये हैं तो कोई मूल यथार्थ सीखना पड़ेगा या नहीं? आहा...हा...! वास्तव में आत्मा है। 'अति आसन्न भव्य जीवों को ऐसे निजपरमात्मा के अतिरिक्त कुछ उपादेय नहीं है।' पण्डितजी! ध्रुव चिदानन्द नित्यानन्द प्रभु, वही एक आदरणीय है और दृष्टि करनेयोग्य है, लक्ष्य करनेयोग्य है; बाकी कोई चीज़ दृष्टि करनेयोग्य नहीं है। आहा...हा...! समझ में आया? यहाँ तो वास्तविक का... नियमसार है न? फिर यहाँ ये चार भाव हैं न?

अपने आया न? चार भाव, देखो! ये चार भाव हैं। उनमें से **किस भाव से मोक्ष होता है, वह विचारते हैं। किस भाव से मोक्ष होता है, वह विचारते हैं।** विचारते हैं (तो) आचार्यों को नया विचार करना होगा? परन्तु सामान्य समाज को साथ में लेकर कहते हैं, भगवान! अपने विचारते हैं। देखो! इसमें सत्य क्या है? पाँच भावों में से किस पर्याय से, किस भाव से मुक्ति होगी? - यह विचारते हैं। विचारते हैं अर्थात् दुनिया को विचार करने को कहना है तो विचारते हैं - ऐसा लिखा है। आचार्यों को विचारना क्या, वे तो हो गये हैं

सब। समझ में आया? तो उसमें किस भाव से मुक्ति होती है? मुक्ति की पर्याय— आनन्दरूपी दशा, सिद्धरूपी अवस्था—किस पर्याय से-किस भाव से पाँच में से (किस भाव से) होती है, यह विचारते हैं।

वहाँ औपशमिक,... दो भाव-औपशमिक के दो प्रकार हैं यहाँ, देखो! उपशम समकित है न, भाव उपशम है न भाव? उपशमभाव के दो भेद-उपशमसमकित और उपशम चारित्र।यह तत्त्वार्थसूत्र में आता है, दूसरे अध्याय में।

मुमुक्षु : सम्यक्चारित्र....

पूज्य गुरुदेवश्री : नहीं, सम्यक्चारित्र नहीं, वह फिर दूसरा। यह तो उपशमभाव में दो, पाँच भाव आया न पहले, उसमें। यह तो उपशम सम्यक्चारित्र और उपशमभाव दो। वह तो-सम्यक्चारित्र तो क्षायिकभाव में भी है परन्तु उपशम में दो, बस, एक सम्यग्दर्शन उपशम। उपशम का अर्थ? कर्म की प्रकृति स्थिर हो गयी है, उदय नहीं है, वह उसके कारण से, हों! अपने में पुरुषार्थ इतना स्वभावसन्मुख होकर उपशम सम्यग्दर्शन प्रगट किया और उस स्वभावसन्मुख होकर स्थिरता, ग्यारहवें गुणस्थान तक उपशमचारित्र। उपशम सम्यग्दर्शन और उपशमचारित्र ये दो पर्याय है। तो पर्याय है, वह आश्रय करनेयोग्य नहीं। समझ में आया? इस उपशमभाव से मुक्ति होगी - ऐसा कहेंगे। समझ में आया? उपशमभाव से मुक्ति होगी। मुक्ति के मार्ग में उपशम, क्षयोपशम और क्षायिक तीनों कहेंगे। अतः उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक में शुद्ध उपयोग आयेगा। पहले से शुद्ध उपयोग, उसे उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक कहते हैं, वह पाठ में आयेगा। समझ में आया?

अजमेर से वह टीका निकली है न.....

मुमुक्षु : उसने तो स्वीकार किया।

पूज्य गुरुदेवश्री : स्वीकार किया है कि भाई! आचार्य तो ऐसा लिखते हैं कि चौथे गुणस्थान से उपशम उपयोग / शुद्ध उपयोग मानते हैं परन्तु आगे-पीछे देखने से शुद्ध उपयोग चौथे से नहीं होता है... समझ में आया?

मुमुक्षु : आचार्य ने आगे-पीछे देखने से नहीं लिखा?

पूज्य गुरुदेवश्री : यह समयसार है, अजमेर से प्रकाशित हुआ है। समझ में आया?

३४१ यहाँ। रात्रि को कहा था देखो! *टीकाकार ने यह बताया है कि कालादिलब्धि के वश से जीव को भव्यत्वशक्ति की अभिव्यक्ति होती है। भव्यत्व का भाव है आत्मा में शक्तिरूप वह कालादिलब्धि के वश से व्यक्तता पर्याय में सम्यग्दर्शन-ज्ञानादि प्राप्त होता है, तभी यह जीव अपने परमात्मद्रव्य का समीचीन श्रद्धान...* तभी यह आत्मा भगवान पूर्णानन्द पूर्ण है ऐसी समीचीन अर्थात् सत्य श्रद्धा *और समीचीन ज्ञान और समीचीन अनुष्ठान-चारित्र करनेरूप में परिणमन करता है।* अपने त्रिकाली भगवान परमात्मा ध्रुवस्वरूप की ओर का आश्रय करके सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप परिणमन करता है। वह मोक्षमार्ग है। *उस परिणाम को ही आगमभाषा में औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिकभाव नाम से कहा जाता है। अध्यात्मभाषा में शुद्धात्मा के अभिमुखपरिणाम और शुद्धोपयोग नाम पाता है।* उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक पर्याय को शुद्ध उपयोग, शुद्धात्माभिमुख परिणाम -ऐसे परिणाम अर्थात् पर्याय (कहा जाता है)। कल ये प्रश्न था कि परिणाम क्या? परिणाम कहो या पर्याय कहो? द्रव्य की चार प्रकार की पर्याय-उदय पर्याय, क्षयोपशम, क्षायिक, उपशम, वह पर्याय है, अवस्था है। वह अवस्था, द्रव्य में नहीं है और उस अवस्था में से किस अवस्था से मुक्ति होती है? क्योंकि **अवस्था से अवस्था होती है।** समझ में आया?

किस भाव से मुक्ति होती है तो 'किस भाव'-यह भी अवस्था है-उपशम, क्षयोपशम और क्षायिक से मुक्ति होती है, वह भी अवस्था है, पर्याय है; द्रव्य-गुण नहीं।

मुमुक्षु : द्रव्य तो करता नहीं?

पूज्य गुरुदेवश्री : यह तो यहाँ सिद्ध करना है। समझ में आया? अवस्था, किस दशा से मुक्ति होती है? किस द्रव्य से मुक्ति होती है-ऐसा नहीं। पश्चात् जो उपशम, क्षयोपशम, क्षायिकभाव निर्मलपर्याय है, वह अवस्था है और अवस्था से मुक्ति होती है, वह भी एक अवस्था है। इस अवस्था का आश्रय द्रव्य है। समझ में आया? परन्तु वह मुक्ति की पर्याय, द्रव्य के आश्रय से नहीं होती, पर्याय से मुक्ति होती है। शोभालालजी! ऐसा है। गजब बात भाई!

कहते हैं कि अरे! *टीकाकार के उल्लेख से चतुर्थ गुणस्थान में शुद्धउपयोग होना सिद्ध होता है। समझ में आया? (अब) गड़बड़ होती है। यहाँ दर्शनमोह का क्षय-उपशम*

हो जाता है तो क्या फिर चतुर्थ गुणस्थान में शुद्ध उपयोग मान लेना चाहिए ? नहीं मानना चाहिए–ऐसा कहकर... *इस गुणस्थान में उदय इसका उत्तर यह है कि यहाँ अध्यात्मशास्त्र में दर्शनमोह और चारित्रमोह दोनों का अभाव हो, उसका नाम शुद्ध उपयोग है* – ऐसा ये कहते हैं। अरे! कहीं वस्तु का पता भी नहीं होता और ऐसी टीका करे। आचार्य का हृदय क्या है, स्वीकार तो करते हैं कि शुद्धोपयोग तो टीकाकार के मत से चौथे गुणस्थान में लगता है।

भगवान आत्मा त्रिकाल परमध्रुवस्वरूप पारिणामिकभाव, वह द्रव्य है। द्रव्य के ध्येय से उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक पर्याय... पर्याय अर्थात् अवस्था अर्थात् परिणाम प्रगट होते हैं तो उस परिणाम को यहाँ शुद्ध आत्माभिमुख, शुद्ध त्रिकाली के अभिमुख परिणाम अथवा शुद्धोपयोग कहने में आया है। तब तो उपशम, क्षयोपशम जब हुआ तो वह शुद्धोपयोग से ही हुआ, वह शुद्धोपयोग ही है ऐसा कहते हैं। आहा...हा...! समझ में आया? सब आचार्य तो चौथे से उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक, निर्मल वीतरागी पर्याय है और वीतरागी पर्याय क्या शुभराग से होती है? वह शुद्धोपयोग ही है। चैतन्य भगवान पूर्ण ध्रुव, ध्रुव का ध्येय बनाकर जो पर्याय उत्पन्न हुई वह पर्याय शुद्ध उपयोग ही है। चौथे गुणस्थान में समकित, वह शुद्धोपयोग से सम्यग्दर्शन उत्पन्न होता है। समझ में आया?

वह समयसार में है न? **उदयति नयश्री अस्तमेति प्रमाणं।** भाई! सबेरे इन्दौरवाले भाई कहते हैं थे न! वहाँ प्रमाण 'अस्तमेति' कहा और यह प्रमाण कहा और निश्चय कहा? वहाँ तो भगवान आत्मा ध्रुवस्वरूप का जहाँ अन्तर्दृष्टि होकर अनुभव हुआ वहाँ तो नय, निक्षेप और प्रमाण का विकल्प ही नहीं है, भेद ही नहीं है। उसका अर्थ यह हुआ कि शुद्धोपयोग से आत्मा में रमते हैं। आहा...हा...! समझ में आया? वह जो अपने सबेरे चला, वह प्रमाण, नय और निक्षेप, निश्चय से... निश्चय पूज्य है, प्रमाण अपूज्य है – ऐसे दो भाग मिलते हैं। वह प्रमाण का तो ज्ञान सामान्य कहते हैं। समझ में आया? और इसमें तो जो विकल्प का प्रमाण था, निश्चयनय का भी विकल्प उसमें नहीं – ऐसा कहते हैं वहाँ। भाई! पहले तो निश्चय का नय यह मैं ध्रुव हूँ, शुद्ध हूँ – ऐसा विकल्प भी नहीं। मैं भेद हूँ – ऐसा विकल्प भी नहीं। यह मैं अभेद और शुद्ध एकाकार हूँ – ऐसा विकल्प भी वहाँ नहीं। ऐसे अन्तर में अनुभव हो, उसका नाम शुद्धोपयोग और उसका नाम सम्यग्दर्शन है। आहा...हा...! समझ में आया?

यहाँ कहते हैं कि बात तो लगती तो है परन्तु अब अपने को दूसरी जगह ऐसा कहा है और वैसा कहा है - ऐसा कहकर उड़ा दिया। यहाँ कहते हैं क्या किया, देखो! किस भाव से मुक्ति होती है? तो जो उपशमभाव (के) दो भाग हैं, उपशम सम्यक्त्व और उपशम चारित्र? पीछे क्षायिकभाव के नौ भेद हैं। है फिर क्षायिकभाव है और पहले लिखाया क्षायिक-क्षायिकभाव लिया, यहाँ क्षयोपशम लिया है पहले, ये अठारह भेद हैं लो! यह मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान और मन:पर्ययज्ञान, ये चार ज्ञान क्षयोपशम भाव से है। यह पर्याय, द्रव्य में नहीं है। समझ में आया? पश्चात् कुमति, कुश्रुत और विभंग / कुअवधिज्ञान -तीन अज्ञान ये भी पर्याय है, परिणाम है। चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन और अवधिदर्शन भी तीन पर्याय है। काललब्धि, करणलब्धि, उपदेशलब्धि (इत्यादि पाँच) लब्धियाँ आती हैं न, उसको यहाँ समाहित कर दिया है, उपशमलब्धि, प्रयोग्यलब्धि—इन भेदों की पाँच लब्धियाँ, ये पाँच लब्धियाँ पर्यायरूप है, सुनो! समझ में आया?

मुमुक्षु : पाँच पर्याय।

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ, परन्तु द्रव्य के आश्रय से सम्यक् पर्याय उत्पन्न होती है परन्तु यहाँ तो पश्चात् सम्यग्दर्शन की पर्याय से मुक्ति होती है-ऐसा कहना है। समझ में आया? उदयभाव के इक्कीस भेद हैं। चार गति, वह पर्याय में है, आत्मा की अवस्था में है, वे आश्रय करनेयोग्य नहीं हैं। मनुष्यगति है तो उसके आश्रय से सम्यग्दर्शन होता है, ऐसा नहीं है और क्रोध, मान, माया, लोभ चार (कषायें), वे भी कषाय पर्याय है। राग-द्वेष की पर्याय, वह भी आश्रय करनेयोग्य नहीं है। वह पर्याय है। स्त्रीलिंग, पुरुषलिंग, नपुंसकलिंग इस भेद से लिंग तीन प्रकार हैं। भाव लिंग भी तीन, हों! सामान्य संग्रहनय से मिथ्यादर्शन एक, अज्ञान एक, असंयम एक, असिद्धत्व एक और शुक्ललेश्या आदि छह लेश्याएँ (इस प्रकार) इक्कीस बोल पर्याय में हैं, उदयभाव में हैं, उदयभाव में हैं, ये सब बोल विकार में हैं; उनसे मुक्ति नहीं होती।

पहले उपशमभाव कहा, उससे मुक्ति होती है। मोक्ष के कारणरूप। ये अठारह भेद जो क्षयोपशम के कहे, उसमें मति-श्रुतज्ञान आदि से मुक्ति होती है।

मुमुक्षु : वह पर्याय बढ़कर क्षायिक होती है।

पूज्य गुरुदेवश्री : क्षायिक होती है। समझ में आया? परन्तु वह पर्याय, द्रव्य में नहीं—ऐसी बात है, भाई! अध्यात्म को बहुत सूक्ष्मरूप से रखा है। आहा...हा...!

पश्चात् पारिणामिकभाव के तीन भेद। (इस प्रकार) ५३ भेद हुए। पाँच भाव के ५३ भेद (हुए)। पहले उपशम के दो; क्षायिक के नौ-क्षायिक सम्यक्त्व, यथाख्यातचारित्र, केवलज्ञान, केवलदर्शन, और अन्तराय के पाँच—दान, लाभ आदि क्षायिक भी पर्याय है। समझ में आया? द्रव्य में पर्याय नहीं परन्तु यह पर्याय, मोक्षरूप है। समझ में आया? गजब बात भाई! जानना कि यह जैनदर्शन क्या चीज़ है? लोग ऐसा का ऐसा मान लेते हैं कि जैनदर्शन ऐसा और वैसा, ऐसा लिखते हैं। बापू! जैनदर्शन सूक्ष्म है, भाई! वस्तु का स्वरूप ही जैनदर्शन है। वह कोई कल्पित सम्प्रदाय नहीं है। कहते हैं कि ये नौ भेद पर्यायरूप हैं। आहा...हा...! इन नौ भेद को, नियमसार में चार ज्ञान को विभावज्ञान कहा है और केवलज्ञान को स्वभावज्ञान कहा है और दूसरी जगह इन चार भाव को—उदय, उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक—चार भाव को आवरणसहित कहा है क्योंकि उसमें निमित्त का अभाव केवलज्ञान में पड़ता है अथवा केवलज्ञान का आश्रय करने से, अपने में तो केवलज्ञान है नहीं, दूसरे को केवलज्ञान है, उसका लक्ष्य करने से तो विकल्प उठते हैं, उसको लाभ नहीं होता। इस कारण चार भाव, विभावभाव कहे गये हैं। आहा...हा...! पहले तीन ज्ञान को विभावभाव कहा था, उसी नियमसार में फिर चार भाव को भी विभावभाव कहा (गाथा ५०) क्योंकि वह त्रिकाली स्वभाव नहीं। विभाव शब्द से विशेष अवस्था। विशेष अवस्था, उसका नाम विभावभाव। वह आश्रय करनेयोग्य नहीं है। समझ में आया?

पारिणामिक में तीन-भव्यत्व, अभव्यत्व, वह आयेगा इसमें, वह आयेगा। देखो! अपने यहाँ क्या कहते हैं, देखो! वह आयेगा, वह तुरन्त ही आयेगा।

उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक और औदयिक चार भाव। चार कहे न अभी! वे पर्यायरूप हैं, अवस्थारूप हैं, दशारूप हैं, परिणामरूप हैं, अंशरूप हैं। **और शुद्धपारिणामिक (भाव), द्रव्यरूप है।...** है इसमें? त्रिकाल... त्रिकाल बिम्ब भगवान चिद्बिम्ब वीतरागमूर्ति अकषायस्वभाव का पिण्ड, वह पारिणामिकभाव, वह द्रव्यरूप है, वस्तुरूप है। समझ में आया? **वह परस्पर सापेक्ष, ऐसा द्रव्यपर्यायद्वय...** द्रव्य और पर्याय युगल, वह आत्मपदार्थ है-**दो मिलकर पूरा आत्मा प्रमाण का विषय कहने में आता है।**

निश्चय का विषय तो ध्रुव आत्मा, वही वास्तव में आत्मा है। आहा...हा...! समझ में आया? वह परस्पर त्रिकाल वस्तु ध्रुव, वह पारिणामिकभाव का आत्मा और चार पर्याय, वह वर्तमान पर्यायरूप आत्मा; पर्यायरूप व्यवहार आत्मा है। आहा...हा...! वह (पारिणामिकभाव) निश्चय आत्मा। मोक्ष भी व्यवहार से होता है और मोक्ष का मार्ग भी व्यवहार है - ऐसी बात है। बन्ध की बात तो एक ओर रखो, परन्तु मोक्ष का मार्ग है, वह व्यवहार है क्योंकि पर्याय है और वह 'जिणामयं' किसी ने पूछा था। प्रश्न नहीं कहा था? तीर्थ और तीर्थ का फल। तुमने प्रश्न किया था न? तीर्थ और तीर्थ का फल, यह तीर्थ भी मोक्ष के मार्ग की पर्याय है, व्यवहार (है) और उसका फल मोक्ष भी व्यवहार, क्योंकि वह एक समय की पर्याय है।

मुमुक्षु : हम तो राग को व्यवहार समझते हैं।

पूज्य गुरुदेवश्री : यहाँ राग-फाग तो कहीं रह गया अब। समझ में आया? राग तो परद्रव्य में स्पष्ट निकाल दिया और **एक समय की पर्याय, द्रव्य की अपेक्षा, वह भी परद्रव्य है** - ऐसी बात है। है?

मुमुक्षु : सिद्ध पर्याय?

पूज्य गुरुदेवश्री : सिद्ध पर्याय है। वीतरागी निर्मल शुद्ध सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र पर्याय, वह तीर्थ है। वह निश्चय द्रव्य की अपेक्षा से **सक्रिय परिणाम** हुआ। भगवान आत्मा **ध्रुव तो निष्क्रिय** है। समझ में आया? थोड़ा-थोड़ा समझना परन्तु यह माल है। ऐ चिमनभाई! भगवान के घर का यह माल है। तेरे घर का यह माल है।

मुमुक्षु : कितनी-कितनी बात याद रखनी पड़ेगी?

पूज्य गुरुदेवश्री : कितना रखना है। उसमें कुछ रखना है? कुछ रखना नहीं है। जो त्रिकाली वस्तु भगवान ध्रुव है, बस वही वास्तविक द्रव्य है और एक समय की अवस्था में चार भाव हैं, वह पर्याय आत्मा है; वह त्रिकाल में नहीं है। इसमें याद कहाँ, कितना रखना है? आहा...हा...! समझ में आया?

वहाँ, प्रथम तो... चौथा पैराग्राफ **जीवत्व, भव्यत्व और अभव्यत्व - ऐसे तीन प्रकार के पारिणामिकभावों में,...** अब पारिणामिक के तीन भेद लिये। वह ऊपर से साधारण

नाम लिया था। उस पारिणामिक के तीन भेद लिये क्योंकि मूल पारिणामिक स्वभाव त्रिकाल है, वह समझाना है। तो भेदरूप पारिणामिकभाव है, वह अशुद्ध पारिणामिक है – ऐसा बताना है। तत्त्वार्थसूत्र में आया न? पारिणामिक के तीन भाव (भेद) जीवत्व, भव्यत्व, अभव्यत्व। यह अशुद्धनय से / व्यवहारनय से कथन है। समझ में आया? आहा..हा..!

यहाँ कहते हैं जीवत्व, भव्यत्व और अभव्यत्व, ये तीन प्रकार के पारिणामिकभाव हैं। इनमें किसी कर्म की, पर की अपेक्षा नहीं है। **शुद्धजीवत्व – ऐसा जो शक्तिलक्षण पारिणामिकपना,...**अब सुनो! शुद्धजीवत्व, त्रिकालध्रुव, शुद्ध जीवपना, आत्मा जो वास्तव में... नियमसार में 'वास्तव में' कहा न! समझ में आया? ऐसा शुद्धजीवपना, त्रिकाल ध्रुवपना, अभेद चैतन्यस्वभावपना, वह शुद्धजीवत्व। **ऐसा जो शक्तिलक्षण...** शुद्ध शक्तिलक्षण है। ध्रुव का लक्षण है, सत्व का लक्षण है, त्रिकाल जीवत्वभाव, वह पारिणामिकपना, वह पारिणामिकभाव है, सहजभाव है, त्रिकालभाव है, एकरूप भाव है। **वह शुद्धद्रव्यार्थिकनयाश्रित होने से...** देखो! पहले यह आया था, शुद्धद्रव्यार्थिकनय से जीव कर्तृत्व-भोक्तृत्व से रहित है। आहा...हा...! भगवान आत्मा त्रिकाली जीवपना अर्थात् ध्रुवपना, ज्ञान-दर्शन-आनन्द-वीर्य आदि ध्रुवपना, जीव का जीवपना, जीव का जीवपना, वह जो त्रिकाली है... जीवत्व है न? उसमें जीवपना है-ऐसा शक्तिलक्षण पारिणामिकपना **शुद्धद्रव्यार्थिकनयाश्रित होने से...** वह तो शुद्ध द्रव्य त्रिकाली का ज्ञान करनेवाला जो नय, उस आश्रित त्रिकाल जीवत्व को ध्रुव कहने में आता है। वह **निरावरण...** है। **वह त्रिकाल जीवत्वस्वभाव तो निरावरण है।** आवरण-फावरण कुछ है नहीं; **आवरण तो नहीं, परन्तु आवरण का अभाव भी उसमें नहीं; वह तो त्रिकाल निरावरणस्वरूप ही है।** समझ में आया?

तीन में जीवत्व, भव्यत्व, अभव्यत्व—तीन में शुद्धजीवत्व—ऐसा जो शक्तिलक्षण पारिणामिकपना, वही वस्तु का त्रिकाली स्वरूप है, वह शुद्धद्रव्यार्थिकनय (आश्रित) होने से त्रिकाली द्रव्य के आश्रय से ज्ञान करनेवाला नय कहते हैं। इस कारण वह निरावरण है। शुद्धजीवपना त्रिकाल निरावरण, शुद्धजीवपना-ध्रुवपना ज्ञान, दर्शन, आनन्द, सत्ता आदि त्रिकाली स्वभावभाव जो जीव का जीवपना, जीव की शक्ति, उसका स्वरूपपना-ऐसा शक्तिलक्षण पारिणामिकपना, वह त्रिकाल निरावरण है। समझ में आया? गजब भाई! श्यामदासजी! यह तो कभी सुना ही नहीं ऐसी बात है।

एक बार यह उसमें रह गया। **और 'शुद्धपारिणामिकभाव' - ऐसी संज्ञावाला जानना;...** शुद्धपारिणामिक त्रिकाल जीवत्वभाव को, ध्रुवस्वभाव को; जिसमें पर्याय की भी अपेक्षा नहीं, अवस्था-हालत की अपेक्षा नहीं, वर्तमान परिणाम की अपेक्षा नहीं-ऐसा त्रिकाली पारिणामिकस्वभावभाव, ध्रुव नित्यानन्द प्रभु की पारिणामिकभाव ऐसी संज्ञा-ऐसा नामवाला उस जीवत्व को कहा जाता है। समझ में आता है या नहीं? बहुत सादी भाषा है, ऐसी कोई कड़क भाषा नहीं है, संस्कृत और व्याकरण और सब (ऐसी भाषा नहीं है) नन्दकिशोरजी! यह आत्मा का ध्रुवस्वरूप, यह ध्रुवस्वरूप—त्रिकालस्वरूप जो दृष्टि का विषय है। सम्यग्दर्शन का विषय-ध्येय वह है; पर्याय-वर्याय वह सम्यग्दर्शन का विषय नहीं है। आहा...हा...!

प्रथम धर्म उत्पन्न होने में वह भगवान त्रिकाली ध्रुवस्वरूप ही आश्रय करनेयोग्य है। नन्दकिशोरजी! है? उसमें है! देखो न! पन्ना तो उसके लिये रखा है, हमारे लालचन्द सेठ आया था कि अपने वहाँ जायें तो हिन्दी है या नहीं वहाँ? लो! आ गया-यह हिन्दी पहले से छपाया है। कहाँ गया लालचन्द सेठ? वह यहाँ बैठा। यह तो यहाँ पहले से छपाया है, पन्द्रह सौ, भाई! ये हिन्दी लोग आयेंगे तो सबको हाथ में देते हैं। हिन्दी पढ़ना पढ़ेगा। गुजराती ठीक से समझ में नहीं आयेगा और भाव गूढ़ है तो पहले से रामजीभाई ने पन्द्रह सौ छपाये हैं। रामजीभाई ने छपाये या छपने का था तो छपा? परन्तु कहने में कैसे आये?

मुमुक्षु : आपने तो सबेरे पढ़ा तू खिरता है - मंगलाचरण में यह पढ़ा, खिरता है।

पूज्य गुरुदेवश्री : यह खिरता है। खिर जाते हैं, नाश नहीं करते-ऐसी चीज़, ऐसी है। तो प्रश्न ऐसा हुआ कि आचार्य ने ऐसा क्यों नहीं लिखा? ऐसा क्यों नहीं लिखा कि कर्म उसके कारण से खिरते हैं, आत्मा कर्म का नाश करता है?- ऐसा लिखा तो उसका अर्थ क्या? प्रत्येक पद में-प्रत्येक गाथा में, उस गाथा का शब्दार्थ करना, नयार्थ करना (कि) किस नय का वाक्य है? और आगमार्थ करना कि यह आगम का भाव है या अन्यमती का भाव है। समझ में आया? और उसका भावार्थ-तात्पर्य क्या है? ऐसे प्रत्येक गाथा में पाँच (प्रकार से) अर्थ करना - ऐसा समयसार में, परमात्मप्रकाश में, द्रव्यसंग्रह में ऐसा चला है। एक-एक गाथा में पाँच-पाँच अर्थ करना। ऐसे शब्दार्थ करना, किस नय का यह वाक्य है? (१) शब्दार्थ (२) नयार्थ (३) आगमार्थ (४) तात्पयार्थ (५) भावार्थ। समझ में आया?

मुमुक्षु : हमें और तो कुछ काम नहीं बस यही करते रहेंगे ?

पूज्य गुरुदेवश्री : यही करते रहना, दूसरा क्या काम है ? धूल भी नहीं कर सकते, कपड़े-बपड़े का व्यापार नहीं कर सकते, कुछ नहीं। तुम्हारा कपड़ा नहीं, सोना है। वह सोने का धन्धा है। सोने में भी सरकार की ओर से झंझट खड़ा हुआ है। इतना खपे और इतना खपे ऐसा करके। ठीक है वह तो ऐसा बाहर में संयोग होता है। यहाँ तो कहते हैं, जीवत्वशक्ति कौन ? त्रिकाल-एक समय की पर्याय भी नहीं, भव्य-अभव्य भी मैं नहीं। समझ में आया ? धर्मी जीव, जीवत्वशक्ति की दृष्टि होने से... समकिती की दृष्टि त्रिकाल जीवत्वशक्ति पर है; उस कारण से वह भव्य-अभव्य मैं नहीं। यह चौदह मार्गणा में आता है या नहीं ? चौदह मार्गणा, गति-जाति, कषाय-लेश्या मार्गणाएँ आती हैं या नहीं ? वे चौदह मार्गणाएँ मुझमें है ही नहीं। आहा...हा... ! समझ में आया ? भेद है न भेद ? पर्याय का भेद, द्रव्य में नहीं, यह यहाँ कहते हैं। **'शुद्धपारिणामिकभाव' - ऐसी संज्ञावाला जानना;.... वह तो बन्धमोक्ष-पर्यायपरिणतिरहित है....** देखो ! कौन ? जो त्रिकाली भगवान चैतन्य ध्रुव जीवत्व नित्यानन्द प्रभु—ऐसा आत्मा का ध्रुवस्वभाव, वह बन्ध-मोक्ष-पर्यायपरिणतिरहित है। उसमें तो बन्ध की पर्याय और मोक्ष की पर्याय की परिणति शुद्धजीवत्वशक्ति में-ध्रुव में नहीं है। समझ में आया ?

कल्याणमूर्ति सम्यग्दर्शन

हे जीवो ! यदि आत्म-कल्याण करना चाहते हो तो पवित्र सम्यग्दर्शन प्रगट करो। वह सम्यग्दर्शन प्रगट करने के लिए सत्समागम से स्वत: शुद्ध और समस्त प्रकार से परिपूर्ण आत्मस्वभाव की रुचि और विश्वास करो, उसी का लक्ष्य और आश्रय करो। इसके अतिरिक्ति जो कुछ है, उस सर्व की रुचि, लक्ष्य और आश्रय छोड़ो। त्रिकाली स्वभाव सदा शुद्ध है, परिपूर्ण है और वर्तमान में भी वह प्रकाशमान है; इससे उसके आश्रय से / लक्ष्य से पूर्णता की प्रतीतिरूप सम्यग्दर्शन प्रगट होगा। यह सम्यग्दर्शन स्वयं कल्याणस्वरूप है और वही सर्व कल्याण का मूल है। ज्ञानी, सम्यग्दर्शन को कल्याण की मूर्ति कहते हैं। इसलिए हे जीवो ! तुम सर्वप्रथम सम्यग्दर्शन प्रगट करने का अभ्यास करो।

—पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी